

भारत के शरणार्थियों की सुरक्षा और अधिकार

Kirti Yadav, Research Scholar, Monad University, Hapur

Dr. Pravin Kumar Chauhan, Associate Professor, Monad University, Hapur

अमूर्त

शरणार्थियों के लिए भारत में कानूनी और अधिकार संरक्षण एक महत्वपूर्ण और सामाजिक मुद्दा है। शरणार्थि वह व्यक्ति है जो नस्ल, धर्म, राष्ट्रीयता, एक चयनित सामाजिक समूह के क्लब और राजनीतिक राय के कारण शुरू में अपने अमेरिका में सताए जाने के सुस्थापित भय के कारण अंतरराष्ट्रीय सीमा पार भाग जाता है और फिर से जाने के लिए तैयार नहीं होता है।

कीवर्ड. शरणार्थी, सुरक्षा, अधिकार, सामाजिक, संरक्षण.

परिचय

शरणार्थियों की सुरक्षा मुख्य रूप से राज्यों की जिम्मेदारी है। इस कारण से, प्रत्येक देश और सरकार ने शरणार्थियों को शरण दी है और उन्हें तब तक रहने की अनुमति दी है जब तक कि परिस्थितियाँ उनके सम्मान और सुरक्षा के साथ अपने घरों में लौटने के लिए अनुकूल नहीं हो जातीं। दुनिया भर में विशेष रूप से विकसित देशों की बढ़ती संख्या ने शरणार्थियों को प्राकृतिकीकरण, भूमि प्रदान करने और कानूनी रोजगार की अनुमति देकर अपने क्षेत्रों में स्थायी रूप से बसने के लिए आमंत्रित किया है। लेकिन अधिकांश देशों में, विशेष रूप से विकासशील या कम विकसित देशों में, वे शरणार्थियों को अस्थायी रूप से बसाते हैं। इस संबंध में, विकासशील देशों ने तर्क दिया कि शरण के बोझ की जिम्मेदारियाँ समान रूप से साझा नहीं की जाती हैं, जबकि वे लाखों शरणार्थियों की मेजबानी करते हैं। कई अमीर देश अपने क्षेत्रों तक पहुंच को प्रतिबंधित कर रहे हैं और विभिन्न स्तरों के अधिकारों के परिणामस्वरूप पहले शरण वाले देशों को समर्थन कम कर रहे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय मामले में, शरणार्थियों का समर्थन करने वाला मुख्य कानूनी मानक राज्यों द्वारा बनाया गया था, और उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी कन्वेंशन 1951 और इसके अतिरिक्त प्रोटोकॉल 1967 को स्वीकार करके शरणार्थियों की रक्षा करने के लिए प्रतिबद्ध किया है,

जिसमें राज्यों के अधिकारों, कर्तव्यों और जिम्मेदारियों की गणना की गई है। इसके पक्षकार।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद एक उपकरण के रूप में 1951 शरणार्थी सम्मेलन का दायरा उन व्यक्तियों तक सीमित था जो 1 जनवरी 1951 से पहले और यूरोप के भीतर होने वाली घटनाओं से भाग गए थे। यह शरणार्थियों से संबंधित पिछले अंतरराष्ट्रीय उपकरणों को समेकित करता है और शरणार्थियों के अधिकारों का सबसे व्यापक संहिताकरण प्रदान करता है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, यह सम्मेलन अंतरराष्ट्रीय शरणार्थी संरक्षण व्यवस्था का समर्थन करता है जो राज्यों द्वारा बनाई गई थी और इस सम्मेलन में शामिल होकर शरणार्थियों की रक्षा के लिए अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की।

वास्तव में, यह कुछ मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है, विशेष रूप से गैर-भेदभाव, गैर-दंड और गैर-वापसी, जो सभी शरणार्थियों पर जाति, धर्म या मूल देश के भेदभाव के बिना लागू होते हैं।

साहित्य और समीक्षा

सिंह, सुशील कुमार और सिंह, सुश्री (2021)। नागरिकता (संशोधन) विधेयक, 2019 (इसके बाद श्विधेयक) जो अधिनियम की मौजूदा धारा 2(1)(बी) में एक प्रावधान पेश करके नागरिकता अधिनियम, 1955 (इसके बाद

शुद्धिनिधिमश) में संशोधन करना चाहता है। अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान के हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाइयों को भारतीय नागरिकता के लिए पात्र बनाना। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में विवादास्पद नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 (सीएए) के खिलाफ देशव्यापी विरोध ने देश के भीतर और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में गहरे विभाजन को रेखांकित किया है। विश्व प्रेस बार-बार प्रकाशित कर रहा है कि सीएए के बाद भारत की स्थापित विदेश नीति और इसकी वैश्विक स्थिति को क्या नुकसान हुआ है। महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि वैश्विक विश्वस्त सहयोगियों में लगातार अलगाव की ओर बढ़ रहे भारत ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों के प्रति भारत की संवैधानिक प्रतिबद्धता पर भी सवाल उठाया है।

सिकंदर, अतुल और सिंह, नकुल. (2022)। गनी प्रशासन से तालिबान शासन में सत्ता के अशांत परिवर्तन ने न केवल प्रतिनिधि लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों के लिए मौत की घंटी का संकेत दिया है, बल्कि इसने पड़ोसी देशों में शरणार्थियों के बड़े पैमाने पर पलायन के लिए उपजाऊ जमीन भी प्रदान की है। इसे देखते हुए, अफगान शरणार्थियों की आमद पर भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया की जांच जरूरी है। भारत न तो 1951 के शरणार्थी सम्मेलन का हस्ताक्षरकर्ता है, न ही 1967 के प्रोटोकॉल का, और, किसी ठोस राष्ट्रीय शरणार्थी कानून और नीति के अभाव में, शरणार्थी का दर्जा चाहने वाले अफगानों पर मामले-दर-मामले के आधार पर कार्रवाई की जाती है। भविष्य की कार्रवाई की रूपरेखा तैयार करने में, इस पेपर का उद्देश्य तालिबान के अधिग्रहण के बाद संभावित अफगान शरणार्थी प्रवाह पर भारत की प्रतिक्रिया का विश्लेषण करना और शरणार्थियों पर ग्लोबल कॉम्पैक्ट (जीसीआर) के भारत के हालिया समर्थन के आलोक में विश्लेषण करना है। यूएनएचसीआर के सीमित जनादेश और क्रमिक सरकारों की ओर से प्राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी की पृष्ठभूमि के खिलाफ, हम तर्क देते हैं कि भारत के सर्वोच्च और उच्च न्यायालय देश में पहले से ही व्यक्तियों के लिए सुरक्षा की एक अस्थायी ढाल बनाने में सहायक रहे हैं। जो विधायी और कार्यकारी प्रतिबद्धताओं के अभाव में गैर-वापसी सिद्धांत के समर्थन के न्यायिक रूप से काम कर रहा है, और तरजीही ष्दयालुता के कार्यष रणनीति, जो मूल या धार्मिक विश्वास के अनुसार विभिन्न शरणार्थी समूहों के

बीच भेदभाव करती है। इसके अलावा, यह तर्क दिया जाता है कि जीसीआर ने भारत में शरणार्थियों को किस तरह देखा जाता है, इस समग्र प्रतिमान में कुछ दखलंदाजी की है। शोध का निष्कर्ष है कि भारत को पुरातन त्वरित-सुधार समाधानों से परे किसी भी रचनात्मक जुड़ाव के लिए शरणार्थियों पर कानून बनाना चाहिए।

होसैनी, सीड और अज़ीज़ी, शिमा। (2017)। इस शोध कार्य में शोधकर्ता भारत में शरणार्थियों के सामाजिक सुरक्षा अधिकारों और गरीबी में कमी के संबंध में विशिष्ट कानून के अस्तित्व और गैर-अस्तित्व के प्रभावों पर विचार करने जा रहा है। भारत में तिब्बत, म्यांमार, नेपाल, श्रीलंका अफगानिस्तान और सूडान सहित विभिन्न देशों के 4.5 लाख शरणार्थी शामिल हैं। इसलिए, यह अध्ययन करना बहुत महत्वपूर्ण है कि भारत में शरणार्थियों और उनके सामाजिक सुरक्षा अधिकारों के संबंध में विशेष कानून की मौजूदगी या अनुपस्थिति उनके बीच गरीबी को कम करने में कैसे प्रभावी हो सकती है जिससे उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो सकता है। वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य शरणार्थियों से संबंधित विभिन्न कानूनों और विशेष रूप से अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय आयामों के तहत उनके कल्याण और सामाजिक सुरक्षा से जुड़े विभिन्न अनुच्छेदों का विश्लेषण करना और भारत के शरणार्थियों से संबंधित उनकी जीवन रणनीतियों की खोज में आने वाली समस्याओं की जांच करना है। इसके अलावा, शरणार्थियों के कल्याण की प्रभावी सुरक्षा के लिए राज्य की जिम्मेदारी पर विचार करने की आवश्यकता है। यह अध्ययन द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। इस संबंध में, विभिन्न पुस्तकालयों का दौरा किया गया और कुछ ऑनलाइन पत्रिकाओं और वेबसाइटों की समीक्षा की गई। इसलिए शोधकर्ता यह साबित करेंगे कि शरणार्थी समुदाय और उनके कल्याण और सामाजिक सुरक्षा अधिकारों के प्रति उपस्थिति कानून इतना स्थिर और पर्याप्त नहीं है और दुर्भाग्य से, भारतीय सरकारें शरणार्थियों के हितों की सुरक्षा के लिए अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों के प्रावधानों को अपर्याप्त रूप से मान्यता और लागू नहीं कर रही हैं।

पॉल, अमृता. (2023)। न्याय तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए कानूनी सहायता तक पहुंच महत्वपूर्ण है। जैसा कि आपराधिक न्याय प्रणालियों में कानूनी सहायता तक पहुंच पर संयुक्त राष्ट्र के सिद्धांतों और दिशानिर्देशों द्वारा जोर दिया गया है, कानूनी सहायता कानून के शासन

(यूएनओडीसी, संयुक्त राष्ट्र के सिद्धांतों और दिशानिर्देशों) पर आधारित निष्पक्ष, मानवीय और कुशल आपराधिक न्याय प्रणाली का एक अनिवार्य पहलू है। आपराधिक न्याय प्रणालियों में कानूनी सहायता तक पहुंच,

2013,

ीजजचेरू//ूूूू.नदवकब.वतह/कवबनउमदजे/रनेज पबम-ंदक-चतपेवद-तमवितउ/च्छ-चतपदबपचसमे- ंदक-हनपकसपदमे-वद-ंबबमे-जव-समहंस- ंपक.चक िपर उपलब्ध है। 18 जुलाई 2022 को एक्सेस किया गया)। कानूनी सहायता तक पहुंच के बिना, दुनिया भर में लाखों लोगों को मनमाने ढंग से प्री-ट्रायल हिरासत, यातना, ज़बरदस्ती स्वीकारोक्ति और गलत सजा के माध्यम से आपराधिक न्याय प्रणाली के साथ बातचीत करने पर उनके अधिकारों की अनदेखी या उल्लंघन होने का उच्च जोखिम होता है। कानूनी सहायता लोगों को अपने अधिकारों का दावा करने और उल्लंघन और भेदभाव के मामले लड़ने के लिए प्रोत्साहित करती है। इसके अलावा, यह यह सुनिश्चित करने में भी मदद करता है कि लोगों को अधिकारों, अधिकारों और दायित्वों के बारे में जानकारी तक पहुंच हो। सीधे शब्दों में कहें तो न्याय तक निष्पक्ष, समान और सार्थक पहुंच की सुरक्षा के लिए कानूनी सहायता तक पहुंच मौलिक है। यह अध्याय अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय दोनों संदर्भों में बच्चों की न्याय तक पहुंच के विचार पर चर्चा करता है। अध्याय घरेलू कानूनी सहायता ढांचे, इसके सिद्धांतों और अभ्यास दोनों का समान रूप से विश्लेषण करेगा। भारतीय कानूनी सहायता ढांचा बच्चों को योग्य लाभार्थियों के रूप में पहचानकर कानूनी सहायता और प्रतिनिधित्व के अधिकार की परिकल्पना करता है। हालांकि, करीब से देखने पर पता चलेगा कि अधिकार के कार्यान्वयन में कई मायनों में कमी है। हिरासत जैसी स्थितियों में बाल शरणार्थियों और शरण चाहने वालों की कमजोर श्रेणी के लिए, न्याय तंत्र तक पहुंच प्राथमिक चुनौतियां प्रस्तुत करती है, जिससे शिकसी को भी पीछे न छोड़ने के आम एजेंडे को विफल कर दिया जाता है।

कानून के सहायक प्रोफेसर अनुसंधान समन्वयक, रमेश कुमार। (2023)। जांदके शरणार्थी संकट अवैध भूमि कब्जा के माध्यम से जनसांख्यिकीय इंजीनियरिंग का परिणाम है जो क्षेत्रीय पहचान के लिए खतरा पैदा करता है। यह पेपर रोहिंग्या मुसलमानों पर विशेष जोर देने के साथ परिणाम, यानी शरणार्थी संकट पर विचार-विमर्श

करता है। इसमें पश्चिमी पाकिस्तान शरणार्थियों (डब्ल्यूपीआर) और गोरखा और वाल्मिकी समुदायों के सदस्यों जैसे विभिन्न समुदायों की दुर्दशा शामिल है। इनमें से कुछ समुदाय पीढ़ियों से जम्मू कश्मीर में रह रहे हैं, लेकिन उन्हें कभी भी स्थायी निवासी के रूप में मान्यता नहीं दी गई और वे अपने ही देश में शरणार्थी के रूप में रह रहे थे। इस बीच, आंतरिक विस्थापन के अपने मुद्दे से निपटने के बीच एक और समुदाय, यानी रोहिंग्या की चुनौती सामने आई। इसमें भारत में रोहिंग्याओं के अवैध प्रवास के साथ-साथ भारत के सामने आने वाले संभावित खतरों को भी शामिल किया जाएगा। यह शोध कार्य क्या, क्यों और कैसे घटित हुआ, इन प्रश्नों का समाधान करने का प्रयास करेगा। अध्ययन उन सुझावों और संकल्पों को प्रदान करके समाप्त होता है जिन्हें हमें पुनर्वास और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए अपनाने की आवश्यकता है।

पूर्वात्तर भारत के शरणार्थियों की सुरक्षा के लिए कानूनी दायित्व

रिफॉलमेंट, भेदभाव आदि के खिलाफ शरणार्थियों के अधिकारों की रक्षा करने के प्रमुख अंतरराष्ट्रीय दायित्व विशेष रूप से 1951 के सम्मेलन और 1967 के प्रोटोकॉल से उभरे हैं। भारत एक हस्ताक्षरकर्ता नहीं है और इस प्रकार भारत में शरणार्थियों के अधिकारों की रक्षा के लिए किसी प्रत्यक्ष दायित्व के अधीन नहीं है। हालांकि, जैसा कि पहले चर्चा की गई है, अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी कानून अन्य मानवीय और मानवाधिकार कानूनों से अलग होकर काम नहीं कर सकता है।

भारत की ओर से 1951 के शरणार्थी सम्मेलन पर हस्ताक्षर करने से इनकार करने मात्र से यह शरणार्थियों की सुरक्षा के लिए बुनियादी मानवीय प्रतिबद्धता का पालन करने से मुक्त नहीं हो जाता है। गैर-हस्ताक्षरकर्ता शरणार्थियों के मूल अधिकारों का सम्मान करने के लिए एक अप्रत्यक्ष कानूनी दायित्व के तहत बहुत अच्छी तरह से हैं यदि वे मानवाधिकार सम्मेलनों के पक्षकार हैं। भारत इस सम्मेलन का सदस्य है और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से बाध्य है। इसलिए, पूर्वात्तर भारत के शरणार्थियों की सुरक्षा में अपनी भूमिका का मूल्यांकन करते समय समग्र रूप से अंतर्राष्ट्रीय कानून को देखा जाना चाहिए।

शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त, जिसका कार्यालय नई दिल्ली में है, लगभग 185,000 शरणार्थियों

को मान्यता देता है। हालाँकि, वास्तविक आंकड़े इससे कहीं अधिक होने का अनुमान है। भारत के गैर-हस्ताक्षरकर्ता होने के कारण उचित पहुंच की कमी ने आयोग को संपूर्ण अनुमान एकत्र करने से रोक दिया है। यह ज्ञात है कि इन शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या पूर्वोत्तर राज्यों में मौजूद है क्योंकि वे कई पड़ोसी देशों के साथ अंतर्राष्ट्रीय सीमाएँ साझा करते हैं और बड़ी संख्या में शरणार्थियों को अपने यहाँ ले जाते हैं।

जैसा कि पहले चर्चा की गई है, एक संहिताबद्ध कानून के बजाय, भारत सरकार शरणार्थियों के मुद्दे को राजनीतिक और प्रशासनिक निर्णयों द्वारा नियंत्रित कर रही है। हालाँकि सरकार की ये कार्रवाइयाँ अंतर्राष्ट्रीय मानवतावादी और मानवाधिकार कानूनों द्वारा नियंत्रित होती हैं। इसे रिफ्यूजमेंट के खिलाफ शरणार्थियों के मूल अधिकार के संदर्भ में समझा जा सकता है, जिसे 1951 के सम्मेलन के तहत कहा गया है और सभी हस्ताक्षरकर्ताओं द्वारा इसका पालन किया जाना चाहिए। भारत इस सम्मेलन का हस्ताक्षरकर्ता नहीं है और इस प्रकार इस सिद्धांत का पालन करने के लिए सीधे तौर पर बाध्य नहीं है। हालाँकि, यहां तक कि गैर-हस्ताक्षरकर्ता भी अप्रत्यक्ष रूप से अन्य अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों जैसे कि अत्याचार और अन्य क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक उपचार या सजा के खिलाफ कन्वेंशन, 1949 के चौथे जिनेवा कन्वेंशन (अनुच्छेद 45) और के अनुसार शरणार्थियों के इस मूल अधिकार का सम्मान करने के लिए बाध्य हैं। नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा (अनुच्छेद 7)।

इसके अलावा, मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा भी सभी राज्यों पर सभी को कुछ बुनियादी अधिकारों की गारंटी देने का दायित्व रखती है और विशेष रूप से शरणार्थियों को शरण लेने का अधिकार भी बताती है। इस प्रकार, हालाँकि भारत शरणार्थी सम्मेलन और उसके प्रोटोकॉल का हस्ताक्षरकर्ता नहीं है, कई अन्य अंतरराष्ट्रीय कानून सरकार के कार्यों पर नज़र रखते हैं और पूर्वोत्तर भारत में शरणार्थियों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा करते हैं।

हालाँकि भारत शरणार्थियों के प्रतिशोध के अधिकार का सम्मान करने और बड़ी संख्या में शरणार्थियों और शरण चाहने वालों को घर प्रदान करने के लिए जाना जाता है, हाल की घटनाओं से संकेत मिलता है कि सरकार शरणार्थियों की मेजबानी करने से इनकार करके और

उन्हें इस तरह का ब्रांड बनाकर निष्कासित करके इस नीति पर वापस जा रही है। षडवैध आप्रवासियों की छत्रछाया। इसलिए, शरणार्थियों से निपटने के प्रति भारत के दृष्टिकोण में कानून और नीति में एकरूपता का अभाव है जो शरणार्थियों को एक कमजोर स्थिति में और सरकार की इच्छा पर निर्भर करता है।

भारत में शरणार्थियों के अधिकारों और मुद्दों पर कानूनी नीति

भारत शरणार्थी सम्मेलन का पक्षकार नहीं है, सम्मेलन में उल्लिखित प्रावधानों को लागू करना भारत के लिए बाध्यकारी नहीं है (जनमिर, 2017)। लेकिन फिर भी, भारत भारत में सभी शरणार्थियों के अधिकारों की रक्षा करने की पूरी कोशिश कर रहा है, भले ही उनकी जाति, क्षेत्र, राष्ट्रियता, किसी भी सामाजिक समूह की सदस्यता या राजनीतिक राय कुछ भी हो। उनके साथ समय-समय पर भारतीय संसद द्वारा पारित स्थानीय कानूनों के अनुसार व्यवहार किया जाता है,

तालिका 1. जनवरी, 2020 तक भारत में शरण चाहने वाले और शरणार्थी

Tibet	1,08,005
Sri Lankans	95,230
Myanmar	21,049
Afghanistan	16,333
Others	3,477

स्रोत: (न्छभ्बू, 2020)

शरणार्थियों को व्यक्तियों की एक विशिष्ट श्रेणी के रूप में मान्यता देने और उनके साथ अन्य सभी विदेशियों के समान व्यवहार करने में भारतीय कानून कमजोर हैं। इस प्रकार, यह उन विशेष परिस्थितियों को समझने में विफल रहता है जिनके तहत एक शरणार्थी अपने मूल देश से भाग जाता है। सामान्य विदेशी अधिनियम व्यवस्था के तहत वैध यात्रा दस्तावेजों की आवश्यकताएं अनिवार्य हैं। शरणार्थियों की सुरक्षा, अधिकारों और अधिकारों पर विशेष कानूनों के अभाव के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में शरणार्थियों को बुनियादी सुरक्षा से वंचित कर दिया गया है। यह इनकार अंतरराष्ट्रीय कानून और उसके अपने संविधान के तहत भारत की मानवाधिकार प्रतिबद्धता की भावना के

खिलाफ है (भट्टाचार्य, 2008)। चूंकि भारत 1951 के शरणार्थी सम्मेलन का पक्षकार नहीं है और साथ ही भारत ने 1967 के प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर नहीं किया था (सेन, 2015)। अतः किसी भी देश से आने वाले शरणार्थियों को स्वीकार करना या न करना भारत के लिए अनिवार्य नहीं है। इसलिए, भारत में शरण चाहने वालों और शरणार्थियों की कानूनी स्थिति विदेशी पंजीकरण अधिनियम 1939 द्वारा निर्धारित की जाती है जो सभी विदेशियों से संबंधित है, विदेशी अधिनियम 1946 जो राज्य को विदेशियों के प्रवेश, उपस्थिति और सभी विदेशियों के प्रस्थान को विनियमित करने का अधिकार देता है।

भारत, नागरिकता अधिनियम 1955 और नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019, जो संविधान में उल्लिखित मानदंडों को पूरा करने वाले अपने और विदेशी व्यक्तियों को नागरिकता प्रदान करने से संबंधित है। पासपोर्ट अधिनियम 1967 सहित ये सभी कानून विदेशियों या विदेशी और वास्तविक शरण चाहने वालों या शरणार्थियों के बीच कोई अंतर नहीं करते हैं। आजादी के 70 साल बाद भी औपनिवेशिक कानून और सिद्धांत भारत पर लागू हैं, उदाहरण के लिए इसके संविधान का अनुच्छेद 372, जो कहता है कि षडस संविधान के शुरू होने से ठीक पहले भारत के क्षेत्र में लागू सभी कानून इसमें लागू रहेंगे। ष जब तक किसी सक्षम विधायिका या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा बदला या निरस्त या संशोधित नहीं किया जाता।

यह सोचने का समय आ गया है कि हमें कब तक औपनिवेशिक कानूनों के साथ रहना होगा और उन पर निर्भर रहना होगा। बदली हुई परिस्थिति में शरणार्थियों से निपटने के लिए हमारे पास अपने कानून होने चाहिए। ये कानून अपने नागरिकों के अलावा अन्य सभी व्यक्तियों को विदेशी मानते हैं या वे स्थिति और द्विपक्षीय संबंधों के अनुसार उन्हें विदेशी और शरणार्थी के रूप में अलग करने के लिए भारत सरकार की दया पर निर्भर हैं (बेट्स)।

1. भारत में शरणार्थियों की कानूनी स्थिति

तिब्बती गंभीर परिस्थिति में अपना देश छोड़कर भारत आ गये हैं। उन्होंने व्यक्तियों के रूप में नहीं बल्कि बड़ी आबादी के साथ शरण ली है। वे तिब्बत में क्रूरता और विनाश से बचने के लिए भाग निकले हैं, और एक पड़ोसी मित्र देश का सुरक्षात्मक कवच मांगा है और उन्हें दिया

गया है। दोनों, लोगों और सांस्कृतिक संस्थानों ने शरण ली है एक मेज़बान देश में (माइकल, 1985)। तिब्बती शरणार्थी से जन्मा बच्चा 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद पंजीकरण प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए पात्र है। तिब्बती शरणार्थियों को विदेश यात्रा के लिए भारत सरकार से अनुमति प्राप्त करने का अधिकार है, जो अन्य शरणार्थियों के मामले में अनुमति नहीं है। तिब्बती शरणार्थियों को निवास परमिट प्रदान किया जाता है जो उन्हें भारत में औपचारिक रोजगार लेने में मदद करता है। जहां तक श्रीलंकाई शरणार्थियों का सवाल है, उन्हें दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है: (ए) शिविर शरणार्थी, या वे जो तमिलनाडु के 23 जिलों में फैले 111 शिविरों में रह रहे हैं, और (बी) गैर-शिविर शरणार्थी, या वे जो शहरों और छोटे कस्बों में या तो किराए के मकानों में या दोस्तों और रिश्तेदारों के साथ रह रहे हैं। 1964 के सिरीमावो-शास्त्री समझौते के तहत, भारत 5,25,000 श्रीलंकाई भारतीयों को लेने पर सहमत हुआ, जबकि श्रीलंका 3,00,000 को नागरिकता देने पर सहमत हुआ (दासगुप्ता, 2003)। श्रीलंकाई शरणार्थियों की कानूनी स्थिति विदेशी अधिनियम 1946 और नागरिकता अधिनियम 1955 द्वारा शासित होती है जो बिना अनुमति या किसी वैध दस्तावेज के भारतीय धरती पर मौजूद विदेशियों या एलियंस से संबंधित है। इन्हें अवैध प्रवासी माना जाता है, लेकिन भारत सरकार ने समय-समय पर श्रीलंका की हिंसक स्थिति को ध्यान में रखा है और तदनुसार उन्हें सुरक्षा प्रदान की है।

जहां तक पाकिस्तान से आए शरणार्थियों का सवाल है, नागरिकता संशोधन नियम 2004 में प्रावधान है कि वे नागरिकता के लिए आवेदन कर सकते हैं जो 12 साल के बजाय 5 साल से लगातार भारत में रह रहे हैं। इसके अलावा, नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 में प्रावधान है कि बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान से प्रताड़ित धार्मिक अल्पसंख्यक जो 31 दिसंबर, 2014 से पहले भारत में प्रवेश कर चुके हैं, वे नागरिकता के लिए आवेदन करने के पात्र हैं। रोहिंग्या के संबंध में भारत में यूएनएचसीआर ने दस्तावेजों के सत्यापन और साक्षात्कार के बाद शरणार्थी स्थिति निर्धारण का अधिकार दिया है। मानदंडों को पूरा करने वालों को संयुक्त राष्ट्र एचआरसी से आवासीय प्रमाण पत्र मिलता है और वे छोटे मासिक वजीफे पाने के पात्र होते हैं।

2. 1951 का शरणार्थी सम्मेलन और भारत

1951 का शरणार्थी सम्मेलन द्वितीय विश्व युद्ध का परिणाम है। यूरोप में लाखों लोग आंतरिक रूप से विस्थापित हुए और साथ ही अत्याचारों से बचने और संघर्ष से बचने के लिए अपने ही देशों के बाहर शरण ली। शरणार्थी शब्द को 1951 के शरणार्थी सम्मेलन के अनुच्छेद 1 द्वारा परिभाषित किया गया है। लेख में कहा गया है, श्1 जनवरी, 1951 से पहले हुई घटनाओं के परिणामस्वरूप और नस्ल, धर्म, राष्ट्रीयता, विशेष सामाजिक समूह की सदस्यता या राजनीतिक राय के कारण सताए जाने के उचित भय के कारण, वह अपनी राष्ट्रीयता के देश से बाहर है और उस देश से सुरक्षा मांगने में असमर्थ या अनिच्छुक और वहां लौटने के लिए अनिच्छुक, शरणार्थी है।” सम्मेलन ने यह भी स्पष्ट किया कि घटित होने वाली घटना का अर्थ है, 1 जनवरी, 1951 से पहले यूरोप या अन्यत्र घटित घटनाएँ। प्रारंभ में, यूरोप के अलावा, अधिकांश गैर-यूरोपीय देशों ने समय सीमा और भौगोलिक प्रतिबंध के कारण सम्मेलन में कोई रुचि नहीं दिखाई थी। . लेकिन कई देशों से इतनी आलोचना मिलने के बाद 1967 के प्रोटोकॉल द्वारा दोनों शर्तों को हटा दिया गया। हालाँकि, भारत ने इस कन्वेंशन पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया है क्योंकि भारत ने अपनी आपत्ति व्यक्त की है जिसके आंतरिक, क्षेत्रीय और अंतरराष्ट्रीय पहलू भी हैं।

सबसे पहले, भारतीय उपमहाद्वीप क्षेत्र की सीमाएँ बहुत छिद्रपूर्ण हैं और इस महाद्वीप के लोगों का किसी न किसी रूप में गहरा साझा इतिहास और सांस्कृतिक इतिहास है। इसमें धार्मिक, भाषाई, नस्लीय और जातीय संबंध हैं। इस क्षेत्र में अलग राजनीतिक व्यवस्था है और इसमें लोगों के दूसरे देश में प्रवेश के सख्त नियम लागू करने के लिए या तो राजनीतिक इच्छाशक्ति या प्रशासनिक और सैन्य क्षमता का अभाव है। दूसरा, भारत को डर है कि विस्थापित लोगों की सीमा पार आबादी की आवाजाही से भारत की आंतरिक सुरक्षा और राजनीतिक स्थिरता प्रभावित होगी। यह संस्कृति, धर्म और जनसांख्यिकी में बदलाव लाएगा जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय और प्रवासी संघर्ष होंगे। भारत पहले ही वर्ष 1983, 2008, 2012, 2017, 2019 में असम में इस तरह के संघर्षों का अनुभव कर चुका है और सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और व्यक्तिगत जीवन के रूप में इसकी बड़ी कीमत चुकाई है। तीसरा, भारत शरणार्थियों के अधिकारों की सुरक्षा के नाम पर आंतरिक मामले में अंतरराष्ट्रीय समुदाय के हस्तक्षेप से अधिक चिंतित है।

हालिया उदाहरण, संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग, मिशेल बाचेलेट जेरिया ने मानवाधिकारों की रक्षा और प्रचार के लिए संवैधानिक संशोधन अधिनियम 2019 के मामले में एमिकस क्यूरिया (तीसरे पक्ष) के रूप में भारत के सर्वोच्च न्यायालय में एक हस्तक्षेप आवेदन दायर किया है। भारत में सभी वर्गों के. इस संबंध में विदेश मंत्रालय के आधिकारिक प्रवक्ता रवीश कुमार ने कहा, श्भारत के आंतरिक मामले और संप्रभुता के मुद्दे पर किसी भी विदेशी पक्ष को कोई अधिकार नहीं है। श्चैथा, भारत पहले से ही अपनी जनसंख्या से अत्यधिक बोझिल है और अपने लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए उसके पास सीमित संसाधन हैं। यदि 1951 के शरणार्थी सम्मेलन द्वारा निर्धारित मानक के अनुसार शरणार्थियों को स्वीकार करना और उनके अधिकारों की रक्षा करना अनिवार्य हो जाता है तो भारत इस स्थिति में नहीं रहेगा।

3. नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) 2019 और भारत में शरणार्थी

इस प्रकार सीएए का पारित होना भारत की एकता को और मजबूत करता है, यह एक ऐतिहासिक और सभ्यतागत अधिनियम है जिसका उद्देश्य किसी की नागरिकता छीनना नहीं है बल्कि इसे भारत के पड़ोस में संकटग्रस्त अल्पसंख्यकों को देना है (आयुष, 2019)। नागरिकता संशोधन विधेयक दिसंबर 2019 में भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया है। इसने नागरिकता अधिनियम, 1955 की धारा 2 में, उप-धारा (1) में, खंड (बी) में बदलाव किए हैं। इसमें निम्नलिखित प्रावधान डाला जाएगा, अर्थात् - ष्षशर्तें कि अफगानिस्तान, बांग्लादेश या पाकिस्तान से हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी या ईसाई समुदाय से संबंधित कोई भी व्यक्ति, जो 31 वें दिन या उससे पहले भारत में प्रवेश करता है दिसंबर, 2014 और जिसे केंद्र सरकार द्वारा पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम, 1920 की धारा 3 की उप-धारा (2) के खंड (सी) के तहत या विदेशियों के प्रावधानों के आवेदन से छूट दी गई है अधिनियम, 1946 या उसके तहत बनाए गए किसी भी नियम या आदेश को इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए अवैध प्रवासी के रूप में नहीं माना जाएगा (कानून और न्याय मंत्रालय, 2019)।

इस विधेयक का उद्देश्य अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान के धार्मिक अल्पसंख्यकों को नागरिकता प्रदान करना है। इस विधेयक ने देश के भीतर और साथ ही देश के बाहर बुद्धिजीवियों, पत्रकारों, शिक्षाविदों,

राजनीतिक समुदाय, धार्मिक समूहों और आम लोगों के बीच इस मुद्दे पर बहस छेड़ दी है कि भारत में लाखों लोग, विशेषकर मुस्लिम समुदाय से, राज्यविहीन हो जाएंगे। (शनि, 2010)। भारत के प्रधान मंत्री और गृह मंत्री ने बार-बार संसद में और संसद के बाहर कहा कि यह विधेयक/अधिनियम भारतीय नागरिकों पर लागू नहीं है। यह केवल पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश के ऊपर उल्लिखित समुदायों पर लागू है।

भारत एक बहुत ही जिम्मेदार देश है और यूडीएचआर 1948, बाल अधिकारों पर कन्वेंशन, महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन जैसी कई अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों का सदस्य होने के नाते, भारत ने 1992 में इस पर हस्ताक्षर किए। 1993, नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता, भारत ने 1979 में इस पर हस्ताक्षर किए आदि, भारत ऐसा कोई कानून नहीं बनाएगा जो लोगों को राज्यविहीन बना दे। भारत सरकार ने शरणार्थियों और शरण चाहने वालों के प्रति हमेशा उदार दृष्टिकोण और खुले दरवाजे की नीति अपनाई है। इसने हमेशा नॉन-रिफाउलमेंट के सिद्धांत का सम्मान किया है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, भारत ने मानवाधिकारों की रक्षा और प्रचार के लिए अधिकांश अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों की पुष्टि की है।

भारत ने अपने घरेलू कानूनों में बदलाव करके शरणार्थियों और शरण चाहने वालों के प्रति हमेशा उदार और सहिष्णु रवैया दिखाया है। भारतीय संविधान शरणार्थियों को भारतीय कानून के तहत अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और भारत के सर्वोच्च न्यायालय से संपर्क करने की अनुमति देता है। नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 शरणार्थियों की प्राकृतिककरण प्रक्रिया के संबंध में अपने घरेलू कानूनों के उदारीकरण की दिशा में एक सकारात्मक कदम है। भारत ने समय के साथ लाखों लोगों को नागरिकता दी है। दुनिया के अधिकांश राज्यों ने 1951 के शरणार्थी सम्मेलन के बाद ही शरणार्थियों के अधिकारों की बात करना शुरू कर दिया था, लेकिन भारत ने शरणार्थियों के अधिकारों की रक्षा तब शुरू की थी जब शरणार्थी शब्द को दुनिया शायद ही जानती थी। 7वीं और 8वीं शताब्दी में जब अरबों ने फारस (अब ईरान) पर आक्रमण किया और पारसी लोगों पर धार्मिक, सांस्कृतिक, भाषाई आधार पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। पारसी लोगों ने भारत में, गुजरात में आश्रय

मांगा था। बंबई भारत में छिहत्तर हजार या उससे अधिक पारसियों के विशाल बहुमत का घर है।

क्रिस्ता-ए-संजन (संजन की कहानी) के अनुसार, उनके आगमन के बाद, गुजरात के राजा जदी राणा ने उन्हें दूध का पूरा गिलास दिया था और संदेश दिया था कि गिलास में जगह नहीं है। पारसी लोगों ने इसमें एक चम्मच चीनी मिला दी और कहा कि हम दूध के भरे कप में चीनी की तरह रहेंगे और इसे खराब नहीं करेंगे। जादी राणा को यह बहुत पसंद आया और उन्होंने उन्हें इस शर्त पर आश्रय दिया कि वे स्थानीय भाषा सीखेंगे, स्थानीय कपड़े पहनेंगे और उनका विवाह समारोह केवल शाम को होगा (बॉयस, 2001)। पारसी लोगों ने बहुत जल्दी इन शर्तों को स्वीकार कर लिया और स्थानीय लोगों के साथ घुल-मिल गये। अब वे स्थानीय लोगों के साथ काफी घुलमिल गए हैं और भारत के स्वतंत्रता संग्राम के साथ-साथ स्वतंत्र युग के बाद के राष्ट्रीय विकास में उनका योगदान बहुत बड़ा है। अन्य देशों को कानूनी तौर पर किसी भी संधि से बंधे बिना प्राकृतिककरण और स्थानीय संस्कृति और लोगों के साथ घुलने-मिलने की प्रक्रिया भारत से सीखने की जरूरत है। बात केवल यही नहीं है, बल्कि भारत के पड़ोस में विकास परियोजना के कारण विस्थापित हुए लोगों ने भारत में आश्रय मांगा और उचित प्रक्रिया में वे भारत के नागरिक भी बन गए। 1962 में कप्ताई बांध परियोजना के कारण तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) के चकमा लोग विस्थापित हुए, जिसके परिणामस्वरूप राज्य प्राधिकरण और प्रभावित लोगों के बीच संघर्ष हुआ, लगभग 100,000 लोग विस्थापित हुए, 45,000 लोग भारत में आ गए। नफीस अहमद कहते हैं, संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी एजेंसी के अनुसार, 2014 तक, विभिन्न देशों से 200000 से अधिक शरणार्थी भारत में रह रहे थे।

सीएए ने देश के भीतर और बाहर इस सवाल पर बहस छेड़ दी है कि भारत केवल अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान के धार्मिक अल्पसंख्यकों के लोगों को ही नागरिकता क्यों दे रहा है? इसने मुस्लिम समुदाय को बाहर क्यों रखा है? इन सवालों ने भारतीय मुसलमानों में अनावश्यक भय पैदा कर दिया है। इसके चलते पूरे देश में प्रदर्शन हुए, जिसकी परिणति फरवरी 2020 में दिल्ली में संघर्ष के रूप में हुई। इस संघर्ष में एक आईबी अधिकारी, एक पुलिस और आम लोगों सहित 52 लोगों की मौत हो गई है। यूरोपीय संसद ने भी सीएए (टाइम्स ऑफ इंडिया, 2020) के खिलाफ एक प्रस्ताव पेश किया।

फ्रांस समेत यूरोप के कई देशों ने इस प्रस्ताव से दूरी बना ली। यूरोपीय आयोग, जो यूरोपीय संसद की कार्यकारी शाखा है, ने कहा कि यूरोपीय संसद द्वारा व्यक्त की गई राय यूरोपीय संघ की आधिकारिक स्थिति नहीं है।

यह पूरी तरह से एक आंतरिक मामला है, “प्रत्येक समाज जो प्राकृतिकीकरण का मार्ग बनाता है वह संदर्भ और मानदंड दोनों पर विचार करता है। यह भेदभाव नहीं है। वास्तव में, यूरोपीय समाजों ने भी यही दृष्टिकोण अपनाया है, श्शू नई दिल्ली ने कहा। यूरोपीय संसद जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ मानवाधिकारों की रक्षा, शरणार्थियों के अधिकारों, राज्यविहीनता को कम करने के संबंध में रचनात्मक भूमिका निभा सकती हैं, उन राज्यों को प्रोत्साहित करके जो उत्पीड़न के कारण अपने देश छोड़ने वाले लोगों को नागरिकता दे रहे हैं, न कि उन्हें हतोत्साहित करने के लिए। ऐसे संकल्प द्वारा (अनिर्बान, 2020)। क्या यूरोपीय संसद के प्रस्ताव का मतलब यह है कि भारत को पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश के उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों को नागरिकता नहीं देनी चाहिए?

क्या उन्हें अपनी पीड़ा जारी रखनी चाहिए? बल्कि, यूरोपीय संसद को उन राज्यों के खिलाफ आर्थिक प्रतिबंध, तकनीकी प्रतिबंध, व्यापार प्रतिबंध, राजनीतिक प्रतिबंध लगाकर प्रस्ताव शुरू करना चाहिए जो संघर्ष का स्रोत, उत्पीड़न का स्रोत, शरणार्थियों का स्रोत, मानव अधिकारों के उल्लंघन का स्रोत हैं ताकि ऐसे राज्यों की हिम्मत न हो। जाति, धर्म, भाषा, राष्ट्रीयता या राजनीतिक राय के बावजूद व्यक्तियों के अधिकारों का उल्लंघन करना। प्रश्न यह है कि केवल इन तीन देशों को ही क्यों चुना गया है, अन्य देशों जैसे म्यांमार से रोहिंग्या, पाकिस्तान से अहमदिया, अफगानिस्तान से हजार, नेपाल से मधेशी, चीन से तिब्बती बौद्धों को क्यों नहीं शामिल किया गया है? सबसे पहले, ये तीन देश आधिकारिक तौर पर इस्लामी देश हैं और इस्लामी आस्था के अलावा अन्य लोग अपने धार्मिक और सांस्कृतिक अधिकारों का पालन करने में असमर्थ हैं। पाकिस्तान में हिंदू और ईसाई लड़कियों को जबरन इस्लाम में धर्म परिवर्तन कराने के कई मामले सामने आते रहते हैं। पाकिस्तान में धार्मिक अल्पसंख्यकों की लड़कियों के साथ जबरदस्ती शादी के मामले सामने आते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर, हुमा का अपहरण अब्दुल जब्बार नाम के एक व्यक्ति ने किया था, उससे शादी की और उसे इस्लाम में परिवर्तित कर दिया जब

वह सिर्फ 14 साल की थी। जब उसके माता-पिता ने अदालत का दरवाजा खटखटाया, तो सिंध उच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि भले ही उसकी उम्र कम हो, लेकिन उसका पहला मासिक धर्म हो चुका है, इसलिए शादी वैध है! पाकिस्तान सरकार, न्यायपालिका और कार्यपालिका के इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप पाकिस्तान में अल्पसंख्यक आबादी में लगातार गिरावट आ रही है। फराहनाज़ इस्पहानिन ने अपने लेखन में बताया कि विभाजन के समय पाकिस्तान में अल्पसंख्यक आबादी 23 प्रतिशत थी जो आज घटकर 3 प्रतिशत रह गई है। माइनॉरिटी राइट्स ग्रुप इंटरनेशनल के अनुसार, बांग्लादेश में यह 1971 में 14 प्रतिशत से घटकर 2018 में 9.4 प्रतिशत हो गया है। अल्पसंख्यक समुदाय लगातार शिक्षा, स्वच्छता, परिवहन और स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच से लेकर व्यवसाय में भेदभाव का सामना कर रहे हैं।

अपहरण और जबरन धर्मांतरण, ईशनिंदा के आरोप, लक्षित हत्याएं और पूजा स्थलों पर लगातार हमले और युद्ध अपराधों जैसी शारीरिक हिंसा के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अनुभव हैं। हमदुर रहमान आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है कि 1971 के बांग्लादेश मुक्ति युद्ध (पाकिस्तान सरकार, 1971) के दौरान हिंदुओं को मारने का लिखित रूप में एक आधिकारिक आदेश था। ये आदेश ब्रिगेडियर अब्दुल्ला मलिक का था। यह मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948 के अनुच्छेद 16 का पूर्ण उल्लंघन है, जो कहता है, ज्ञाति, राष्ट्रीयता या धर्म की किसी भी सीमा के बिना पूर्ण आयु के पुरुषों और महिलाओं को शादी करने और परिवार स्थापित करने का अधिकार है। इसके अलावा, पवित्राह केवल इच्छुक जीवनसाथी की स्वतंत्र और पूर्ण सहमति से ही किया जाना चाहिए।

यह पाकिस्तान की ओर से महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन, 1979 और यूडीएचआर, 1948 का पूर्ण उल्लंघन है। दूसरा, इसने मुसलमानों को बाहर क्यों रखा, क्योंकि ये देश इस्लामिक राज्य हैं और बहुसंख्यक आबादी मुस्लिम है, इसलिए यह कहना अनुचित है कि वे धार्मिक आधार पर अभियोजन के अधीन हैं, लेकिन अगर ऐसा है, तो इन देशों के किसी भी व्यक्ति को उचित भय का सामना करना पड़ रहा है। किसी भी आधार पर उत्पीड़न के शिकार लोग भारत में सुरक्षा की मांग कर सकते हैं या भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन भी कर सकते हैं

(इमोन, 2012)। पाकिस्तान के अदनान सामी को मुस्लिम होते हुए भी भारतीय नागरिकता मिल गई है या तस्लीमा नसरीन एक सुविचारित डर के कारण भारत में रह रही हैं, वह भी मुस्लिम हैं। कानून के माध्यम से भारत का प्रयास नागरिकता प्रदान करना है। यह काफी हद तक 1951 के शरणार्थी सम्मेलन के अनुच्छेद 34 के अनुरूप है, जिसमें कहा गया है, “संविदा करने वाले राज्य जहां तक संभव हो शरणार्थियों के समावेशन और प्राकृतिकीकरण की सुविधा प्रदान करेंगे।

वे विशेष रूप से प्राकृतिकीकरण की कार्यवाही में तेजी लाने और जहां तक संभव हो ऐसी कार्यवाहियों के शुल्क और लागत को कम करने के लिए हर संभव प्रयास करेंगे। इसलिए यह कहना गलत है कि यह कानून भेदभावपूर्ण है, मुसलमानों के खिलाफ है या मुसलमानों को इससे बाहर रखा गया है। तीसरा, मेरी राय में, यदि भारत को यह अधिनियम सफल कार्यान्वयन में सुविधाजनक लगता है, तो भविष्य में भारत इस अधिनियम को अन्य पड़ोसी देशों जैसे नेपाल, म्यांमार, भूटान, श्रीलंका और चीन तक भी विस्तारित कर सकता है।

निष्कर्ष

भारत में मॉडल देशव्यापी कानून को अपनाना शरणार्थी सुरक्षा की दिशा में पहला कदम है। शरणार्थियों की रक्षा के लिए न्यायपालिका और मानव अधिकार इकाइयाँ ही एकमात्र स्रोत हैं जो मामले दर मामले पर निर्भर करती हैं, हालाँकि कठिनाइयाँ तब उत्पन्न होती हैं जब विशेष राज्यों से आने वाले शरणार्थियों की बड़े पैमाने पर आमद होती है। यूएनएचसीआर का सबसे सरल कार्य शरणार्थियों को अपने अधिकार क्षेत्र में लाना है। ऐसी स्थिति में जहां भारत सरकार यूएनएचसीआर और अन्य विदेशी मानवीय समूहों को प्रवेश देने से इनकार करती है, घरेलू एनजीओ शरणार्थियों को पुरक्षा प्रदान करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। घरेलू कानून बनाकर, शरणार्थी को आईडीपीएस से अलग किया जा सकता है और विशिष्ट सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है। परिणामस्वरूप अब भारत को 1951 सम्मेलन पर हस्ताक्षर करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि सुरक्षा पहले ही भारतीय चार्टर और न्यायपालिका द्वारा दी जा चुकी है। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि सुरक्षा और प्रवर्तन अधिकारी शरणार्थी स्थिति, विशेष रूप से उत्तरार्द्ध में

निहित कानूनी और अंतर्निहित मानवीय कोणों की उपेक्षा न करें।

संदर्भ

1. सिंह, सुशील कुमार और सिंह, सुश्री (2021)। शरणार्थी की स्थिति और नागरिकता के आलोक में उनकी नागरिकता के मुद्दे की एक झलक। 51. 354-363.
2. सिकंदर, अतुल और सिंह, नकुल। (2022)। भारत और शरणार्थी कानूनरू अफगान शरणार्थियों पर भारत की स्थिति का आकलन। कानून। 11. 31. 10.3390/कानून11020031.
3. होसैनी, सीड और अज़ीज़ी, शिमा। (2017)। भारत में शरणार्थियों के संरक्षण में शरणार्थी कानून की उपस्थिति या अनुपस्थिति - सामाजिक सुरक्षा और गरीबी में कमी। ईपीआरए इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकोनॉमिक एंड बिजनेस रिव्यू। 5. 70-89.
4. पॉल, अमृता. (2023)। पहुंच से परे कानून भारत में बाल शरणार्थियों के लिए कानूनी सहायता। 10.1007/978-981-99-5551-0-11.
5. कानून के सहायक प्रोफेसर अनुसंधान समन्वयक, रमेश कुमार। (2023)। आज के वैश्वीकृत विश्व में सामाजिक-कानूनी परिप्रेक्ष्य-जम्मू और कश्मीर में शरणार्थी संकट, रोहिंग्या शरणार्थियों पर विशेष जोर के साथ एक महत्वपूर्ण अध्ययन।
6. सीआरसी के बीस वर्षरू एक बैलेंस शीट, वॉल्यूम। मैं, बाल अधिकार केंद्र, नई दिल्ली, 2011।
7. विलजोएन, फ्रैंस, अफ्रीका में अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, यू.के., 2012।
8. वुल्फ, एस.ओ., जे. शोटली एट। अल. (संस्करण), दक्षिण एशिया में राजनीतिरू संस्कृति, तर्कसंगतता और वैचारिक प्रवाह, स्विंग इंटरनेशनल पब्लिशिंग, स्विट्जरलैंड, 2015।
9. जुत्सी, आर.टी., जयश्री सातपुते, और अन्य। (संस्करण), शरणार्थी और कानून, मानवाधिकार कानून नेटवर्क, नई दिल्ली, 2011।
10. डोभाल, हर्ष (सं.), राइटिंग्स ऑन ह्यूमन राइट्स, लॉ एंड सोसाइटी इन इंडियारू ए कॉम्बैट लॉ एंथोलॉजी, ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क, नई दिल्ली, 2011।

11. कोजुमी, कोइची और जी. हॉफस्टैटर (संस्करण), शहरी शरणार्थीरू सुरक्षा, सेवाओं और नीति में चुनौतियां, रूटलेज पब्लिशर्स, 2015।
12. लैम्बर्ट, हेलेन (सं.), अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी कानून, एशगेट प्रकाशन कंपनी, 2012।
13. लुईस, कोरिन, यूएनएचसीआर और अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी कानूनरू संधियों से नवाचार तक, रूटलेज पब्लिशर्स, न्यूयॉर्क, 2012।
14. मूर, जेनिफर, ह्यूमैनिटेरियन लॉ इन एक्शन विदइन अफ्रीका, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क, 2012
15. जयाल, नीरजा गोपाल, नागरिकता और उसके असंतोषरू एक भारतीय इतिहास, लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस, यूएसए, 2013।

sharanaarthiyon ke lie bhaarat mein kaanoonee aur adhikaar sanrakshan ek mahatvapoorn aur saamaajik mudda hai. sharanaarthee vah vyakti hai jo nasl, dharm, raashtreeyata, ek chayanit saamaajik samooch ke klab aur raajaneetik raay ke kaaran shuroo mein apne amerika mein satae jaane ke susthaapit bhay ke kaaran antararaashtreey seema paar bhaag jaata hai aur phir se jaane ke lie taiyaar nahin hota hai. keevard. sharanaarthee, suraksha, adhikaar, saamaajik, sanrakshan.